IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

गुरु शिष्य परम्परा का उपनिषदीय विश्लेषणात्मक अध्ययन

मीना कुमारी [1]

शोधार्थी, योग विभाग, केंद्रीय विश्वविद्यालय महेंद्रगढ़, हरियाणा

अंकिता [2]

एम.एससी., योग विभाग, केंद्रीय विश्वविद्यालय महेंद्रगढ़, हरियाणा

सुदेश कुमार[3]

एम.एससी., योग विभाग, केंद्रीय विश्वविद्यालय महेंद्रगढ़, हरियाणा

डॉ० नवीन [4]

सहायक आचार्य, योग विभाग, केंद्रीय विश्वविद्यालय महेंद्रगढ़, हरियाणा

सारांश- भारतीय सांस्कृतिक धरोहर गुरु शिष्य परम्परा में 'गुरु' शब्द केवल आधुनिक शब्द शिक्षक का द्योतक नहीं है, अपितु गुरु तो अज्ञानता का नाशक, उस चैतन्य स्वरूप ईश्वर का प्रेरक एवं आत्मबोध करानें वाली सत्ता का नाम है । भारतीय ज्ञान प्रणाली में गुरु को मानव के समग्र विकास में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त है क्योंकि गुरु को ब्रह्मा, विष्णु व महेश्वर का स्वरूप मानते हुए कहा गया है कि **'गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः'** [1] अर्थात ब्रहमा विष्णु की तरह गुरु के अंदर ही जीवन को सही दिशा देने, पालन करने (जीवन में भरण पोषण का मार्ग दिखाने) व समाज व राष्ट्रहित के लिए गुरु , शिष्य के लिए कठोर निर्णय ले सकता है इसलिए सामान्य भाषा में कहा गया है कि जीवन व प्रलय गुरु की गोद में खेलते हैं । संत कबीरदास जी ने अपने सुप्रसिद्ध दोहा में गुरु को ईश्वर प्राप्ति का अनिवार्य माध्यम बताते हुए कहा कि-

[1] ;श्री गुरुगीता 32द्ध

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूं पाय। बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो बताय ।।[2]

अर्थात कबीर का कहना है कि जब शिष्य के सामने गुरु व गोविन्द अर्थात भगवान दोनों एक साथ खड़े हो तब दोनों में से मैं पहले किसको चरण स्पर्श सहित प्रणाम करूं? मैं अपने गुरु पर बलिहारी जाता हूँ अर्थात सर्वप्रथम गुरु को प्रणाम करता हूँ क्योंकि ईश्वर तक पहुंचने का रास्ता गुरु के द्वारा ही बताया गया है । साध्य (ईश्वर) प्राप्ति के लिए साधन (गुरु) अत्यंत अनिवार्य है इसलिए गुरु का स्थान ईश्वर से भी श्रेष्ठ बताया गया है ।

मुख्य शब्द: गुरु, शिष्य, अष्टाङ्गयोग की साधना, साध्य, साधन, आधुनिक प्रासंगिकता, मोक्ष ।

शोध के मुख्य उद्देश्य-

1. गुरु शिष्य परंपरा को ऐतिहासिक व शास्त्रीय दृष्टिकोण से समझाना ।
2. आधुनिक योग शिक्षा प्रणाली गुरु-शिष्य परंपरा की प्रासंगिकता को सिद्ध करना ।
3. उपनिषदों में वर्णित गुरु शिष्य सम्बंध व उनके प्रभाव को स्पष्टता से दिखाना ।

प्रस्तावना-

भारतीय साधना परम्परा केवल धार्मिक आचार- विचारों तक सीमित न होकर एक समग्र जीवन-पद्धति है जिसमें मनुष्य विभिन्न योगांगों का नियमन करते हुए अपने स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर को शुद्ध, परिपक्व, परिमार्जित और उन्नत बनाते हुए आत्मिक, नैतिक, सामाजिक मूल्यों में वृद्धि के साथ मोक्ष की ओर अग्रसर होता है। भारतीय जीवन साधना परम्परा में गुरु-शिष्य परम्परा का मुख्य स्थान है, क्योंकि इस प्रणाली का उद्देश्य केवल पुस्तकीय ज्ञान न होकर, अपितु समग्र व्यक्तित्व निर्माण करना है । गुरु-शिष्य परम्परा आधारित जीवन व्यतीत करने व जीवन के मुख्य उद्देश्य (मोक्ष) को प्राप्त करने के लिए भारतीय ज्ञान प्रणाली के आधार पर वैदिक ग्रंथों में गुरु व शिष्य के गुणों व लक्षणों का उल्लेख इस प्रकार किया गया है-

शिष्य-

शिष्य इति च विद्याध्वस्तप्रपञ्चावगाहितज्ञानावशिष्टं ब्रह्मैव शिष्यः ॥ [3]

जिसके हृदय में विद्या द्वारा नष्ट हुए जगत् के अवगाहन से उत्पन्न ब्रह्म रूप ज्ञान शेष रहे, वही शिष्य है । अर्थात गुरु द्वारा शिक्षा ग्रहण करने का अधिकारी केवल वह रखता है जो इस मिथ्या संसार के विषय वासना युक्त ज्ञान को केवल त्याग ही नहीं देता है अपितु गुरु के द्वारा दिए गए उपदेश व निर्देश ही उसके लिए अटूट सत्य होते हैं, वही मनुष्य वास्तविक रूप में शिष्य कहलाने का अधिकारी है ।

श्रवणं तु गुरोः पूर्वं मननं तदनन्तरम्। निदिध्यासनमित्येतत् पूर्णबोधस्य कारणम् ॥ [4]

[2] (कबीर साखी 10)
[3] ;**निरालम्बनोपनिषद 31)**
[4] ;**शुकरहस्योपनिषद** 43द्ध

शिष्य को ज्ञान का पूर्ण बोध तभी हो सकता है, जब वह सर्वप्रथम गुरु के निर्देशानुसार उपदेश सुने, फिर उस उपदेश का अनुसरण व उपयोग करे, तदनन्तर निदिध्यासन रूपी अर्थात आत्म चिन्तन व ब्रहम चिन्तन की साधना करे ।

गुरु-

गुशब्दस्त्वन्धकारः स्याद्रुशब्दस्तन्निरोधकः।

अन्धकारनिरोधित्वाद्गुरुरित्यभिधीयते ॥ [5,6]

गुरु शब्द दो शब्दों के मेल से बना है गु व रु । जहाँ 'गु' का अर्थ है-अन्धकार एवं 'रु' का अर्थ है- अन्धकार को रोकने में समर्थ । अतः अन्धकार (अज्ञान) को दूर करने वाला ही गुरु कहलाता है । अर्थात अज्ञानतारुपी अन्धकार को रोकने वाले व जीवन को सकारात्मक दिशा देने वाले महान पुरुष को गुरु कहते हैं ।

आचार्य के लक्षण-

आचिनोति हि शास्त्रार्थानाचारस्थापनादपि। स्वयमाचरते यस्तु तस्मादाचार्य उच्यते ॥ [7]

जो मनुष्य शास्त्रोंक्त शब्दों के अर्थ को सम्यक प्रकार से समझ कर ज्ञान प्राप्त करता है वह सदाचार की केवल स्थापना ही नहीं करता बल्कि स्वयं भी उस ज्ञान के अनुरूप वैसा ही आचरण करता है, वही ही आचार्य कहलाता है ।

आचार्यों वेदसम्पन्नो विष्णुभक्तो विमत्सरः। योगज्ञो योगनिष्ठश्च सदा योगात्मकः शुचिः ॥[8]

गुरुभक्तिसमायुक्तः पुरुषज्ञो विशेषतः । एवं लक्षणसंपन्नो गुरुरित्यभिधीयते ॥ [9]

अर्थात वेदों के ज्ञान से सम्पन्न, उत्तम व श्रेष्ठ आचरण करने वाला, विष्णुभक्त, मत्सर आदि सभी प्रकार के दोषों व विकारों से रहित, योगविद्या का ज्ञाता, योग के प्रति पूर्ण निष्ठा रखने वाला, योगात्मा, पवित्रता युक्त, गुरुभक्त, परमात्मा की प्राप्ति में विशेष रूप से निरंतर संलग्न रहने वाला- इन उपर्युक्त लक्षणों से सम्पन्न पुरुष ही गुरु रूप में अभिहित किया जाता है ।

आचार्यों वेदसंपन्नो विष्णुभक्तो विमत्सरः। मन्त्रज्ञो मन्त्रभक्तश्च सदामन्त्राश्रयः शुचिः ॥ [10]

गुरुभक्तिसमायुक्तः पुराणज्ञो विशेषवित्। एवं लक्षणसंपन्नो गुरुरित्यभिधीयते ॥ [11]

---

[5] **(अद्वाताराकोपनिषद 16)**
[6] **;द्वयोपनिषद 4द्ध**

[7] **(द्वयोपनिषद 3)**
[8] **(अद्वाताराकोपनिषद 14)**
[9] **(अद्वाताराकोपनिषद 15)**
[10] **;द्वयोपनिषद 1)**
[11] **;द्वयोपनिषद 2)**

जो आचार्य वेद ज्ञान से सम्पन्न, समस्त मंत्रों का ज्ञाता, मंत्रों का भक्त अर्थात मंत्रोचारण में रूचि रखने वाला, मंत्रों का आश्रय लेने वाला अर्थात जीवन पथ में अग्रसरता के लिए सर्वश्रेष्ठ आचरण हेतु मन्त्रों का सहारा लेने वाला, पुराणों का ज्ञाता, विशेषज्ञ, पवित्र, ईर्ष्यारहित, विष्णु भक्त और गुरु भक्त हो इन सभी लक्षणों से सम्पन्न व्यक्ति को 'गुरु' कहते हैं ।

उपनिषदों के अनुसार गुरु की तत्त्वमीमांसा, स्वरूप और महिमा-

गुरुरेव परं ब्रह्म गुरुरेव परा गतिः। गुरुरेव परा विद्या गुरुरेव परायणम् ॥ [12]

गुरु ही परम ब्रह्म परमात्मा है, गुरु ही परम (श्रेष्ठ) गति है, गुरु ही पराविद्या है और गुरु ही परायण (उत्तम आश्रय) है। अर्थात जीवन को श्रेष्ठ गति प्रदान करने वाला, आत्मज्ञान करने वाला एवं इस मिथ्या संसार से हारने वाले का उत्तम सहारा, गुरु ही है । परमब्रह्म परमात्मा का ज्ञान कराने वाले को परमात्मा ही कहते हैं क्योंकि जैसे- किसी भी वस्तु, पदार्थ या शाखा का अंश ही हमें अपनी विशिष्टता का ज्ञान दे सकता है ठीक उसी प्रकार परमब्रह्म परमात्मा का ज्ञान कराने वाला उसी परमात्मा का अंश होता है, इसलिए गुरु को परमात्मा की उपाधि से भी नवाजा गया है ।

गुरुरेव परं ब्रह्म गुरुरेव परा गतिः। गुरुरेव परं विद्या गुरुरेव परं धनम् ॥ [13]

गुरु ही परम ब्रह्म है, गुरु ही परागति है, गुरु ही परम विद्या है और गुरु को ही परम धन कहा गया है ।

उपास्य इति च सर्वशरीरस्थचैतन्यब्रह्मष्प्रापको गुरुरुपास्यः ॥ [14]

समस्त जीवों के शरीरों में स्थित, चैतन्य स्वरूप ब्रह्म अर्थात परमात्मा की प्राप्ति करवाने वाला गुरु ही उपासना के योग्य है । अर्थात गुरु उपासना या गुरु के निर्देशानुसार प्राप्त ज्ञान के द्वारा ही समस्त जीवों में स्थित उस परम तत्त्व के अंश का ज्ञान प्राप्त करके, उस परमब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति की जा सकती है ।

गुरुरेव पराकाष्ठा गुरुरेव परं धनम् । यस्मात्तदुपदेष्टासौ तस्माद्गुरुतरो गुरुरिति ॥ [15]

ऐसा जानना चाहिए कि गुरु ही पराकाष्ठा है, गुरु ही परमश्रेष्ठ धन है। जो श्रेष्ठ उपदेश करता है, वही गुरु से गुरुतर अर्थात् श्रेष्ठ से श्रेष्ठतम गुरु है । अर्थात गुरु की महिमा का वर्णन करते हुए बताया गया है कि अत्यन्त उत्कर्ष या चरम सीमा की स्थिति तक उत्तम ज्ञान देने वाला तथा शिष्य को शिखर पर पहुँचाने वाला एवं सर्वश्रेष्ठ अचौर्य धन गुरु ही है ।

---

[12] ;**अद्वाताराकोपनिषद 17**द्ध

[13] ;**द्वयोपनिषद 5**द्ध

[14] ;**निरालम्बनोपनिषद 30)**

[15] ;**अद्वाताराकोपनिषद 18**द्ध

गुरुरेव परः कामः गुरुरेव परायणः । यस्मात्तदुपदेष्टासौ तस्माद्गुरुतरो गुरुः ॥ [16]

गुरु ही सर्वोत्तम अभिलषित वस्तु है, गुरु ही परम आश्रय स्थल है तथा परम ज्ञान का उपदेष्टा होने के कारण गुरु ही महान होता है । अर्थात ज्ञान प्राप्ति की कामना करने वाले शिष्य को गुरु की शरण में जाकर उपदेश/ ज्ञान लेना चाहिए क्योंकि गुरु के सानिध्य से ही सर्व कामना प्राप्ति हो सकती है । इसलिए ज्ञान के इच्छुक मनुष्य की सर्वश्रेष्ठ कामना सांसारिक सुख न होकर गुरु सानिध्य की प्राप्ति होनी चाहिए ।

अष्टाङ्गयोग की साधना में गुरु का स्थान-

शिखा ज्ञानमयी वृत्तिर्यमाद्यष्टाङ्गसाधनैः । ज्ञानयोगः कर्मयोग इति योगो द्विधा मतः ॥ [17]

योग के दो मार्ग बतलाये गये हैं, जिनमें प्रथम ज्ञानयोग एवं द्वितीय कर्मयोग है । यम-नियमादि अष्टाङ्गयोग की साधना के द्वारा ज्ञानरुपी शिखा प्रादुर्भूत होती है । अर्थात गुरु के सानिध्य में योग के आठ अंगों (यम ,नियम आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान व समाधि) का अभ्यास करने से ज्ञान रूपी द्वार खुलते हैं जो योग सिद्धि में सहायक है । यहाँ निरन्तर अभ्यास करना कर्मयोग का प्रतिपादक एवं उनके परिणाम के रूप में अज्ञानता या अविद्या का नष्ट होना ज्ञानयोग का प्रतिपादक है । अतः योग सिद्धि के लिए ज्ञानयोग व कर्मयोग दो सर्वश्रेष्ठ मार्ग बताये गए हैं ।

स याति परमं श्रेयो मोक्षलक्षणमञ्जसा। देहेन्द्रियेषु वैराग्यं यम इत्युच्यते बुधैः॥ [18]

विद्वानों का मानना है की शरीर एवं इन्द्रियों के प्रति सभी तरह से वैराग्य भावना रखने वाले अर्थात यम का पालन करने वाला मनुष्य जब ज्ञानयोग एवं कर्मयोग का विकार रहित भाव से सेवन करता है वह अति शीघ्र मोक्ष रूपी परम श्रेय को प्राप्त कर लेता है । अतः गुरु के निर्देशानुसार यम का पालन करने व इन्द्रिय निग्रह से ज्ञानयोग व कर्मयोग का परिणाम उर्ध्वगामी होता है जो मोक्ष प्राप्ति में सहायक है ।

शास्त्रों की आवश्यकता – शास्त्रोक्त ज्ञान प्राप्ति का प्रथम साधन गुरु ही है इसको स्पष्ट करने के लिए शास्त्रों के महत्व का वर्णन इस प्रकार किया गया है -

शास्त्रं विनापि संबोद्धं गुरवोऽपि न शक्नुयुः। तस्मात्सुदुर्लभतरं लभ्यं शास्वमिदं मुने ॥ [19]

यहाँ बताया गया है कि शास्त्रों के बिना गुरु भी ज्ञान प्राप्ति नहीं करवा सकते, इसलिए हे मुने। शास्त्रों का होना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि यह शास्त्र बहुत महत्वपूर्ण है । वेद इस संसार में प्रथम संदर्भित ग्रन्थ /शास्त्र हैं । इन शास्त्रों के अध्ययन के बिना गुरु भी ज्ञान प्राप्त नही कर सकते इसलिए गुरु के ज्ञान प्राप्ति में शास्त्र अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं ।

अतः सिद्ध होता है कि शास्त्रों से गुरु को, गुरु से शिष्य को ज्ञान प्राप्त होता है इसलिए शास्त्रोक्त ज्ञान प्राप्ति का प्रथम साधन गुरु ही है अर्थात ज्ञान प्राप्ति का प्रथम साधन शास्त्र ही हैं ।

---

[16] ;**द्वयोपनिषद** 6द्ध
[17] (**त्रिशिखोब्रह्मण उपनिषद** 23)
[18] ;**त्रिशिखोब्रह्मण उपनिषद** 28द्ध
[19] ;**योगकुंडल्योपनिषद** 2ए10द्ध

आधुनिक योग-शिक्षा में गुरु–शिष्य परम्परा की यौगिक प्रासंगिकता-

आज के समय में योग तीव्र गति से विश्वविद्यालयों, योग-संस्थानों, ऑनलाइन प्लेटफार्मों द्वारा वैश्विक स्तर पर किया जा रहा है । इन सभी माध्यमों के द्वारा योग को विश्व स्तर पर लोकप्रियता तो प्राप्त हो रही है लेकिन इसके पारम्परिक स्वरूप (शारीरिक स्वरूप के साथ मानसिक व आध्यात्मिक स्वरूप) को संकुचित किया गया है । उपर्युक्त माध्यमों से योग पढ़ने व सिखने पर योग प्रशिक्षक तो बन रहे हैं लेकिन योग गुरु नहीं । आज के समय में यह जानना अत्यंत आवश्यक है की योग केवल शारीरिक क्रिया नहीं है अपितु यह तो एक आन्तरिक रूपान्तरण की प्रक्रिया है, जिसे गुरु के मार्गदर्शन के बिना किया जाए तो यह क्रिया लाभकारी होने की बजाय हानिकारक हो सकती है । गुरु के दिशा- निर्देश के बिना सही ढंग से यौगिक क्रियाओं को सम्पन्न करवाना अत्यंत असम्भव है । इसलिए योग का सम्पूर्ण लाभ लेने के लिए गुरु का सानिध्य अत्यंत आवश्यक है ।

भारतीय ज्ञान प्रणाली की सर्वश्रेष्ठ परम्परा गुरु-शिष्य परम्परा है क्योंकि इसमें गुरु केवल शिक्षक या प्रशिक्षक नहीं होता, बल्कि वह शिष्य के समग्र व्यक्तित्व का मार्गदर्शक, प्रेरक और संस्कार-परिवर्तक होता है, इसीलिए इस प्रणाली के अनुसार गुरु शिष्य का संबंध औपचारिक, समयबद्ध और पाठ्यक्रम-केन्द्रित न होकर अनौपचारिक, आत्मीय, दीर्घकालिक और साधनात्मक होता है । गुरु के द्वारा शिष्य के आहार-विहार, आचरण, मानसिक प्रवृत्तियों और आध्यात्मिक अभिरुचियों को ध्यान में रखकर उसे समग्र व्यक्तित्व प्रदान किया जाता है । आधुनिक युग में योग मुख्यतः आसन व प्राणायाम तक सीमित हो गया है, जबकि भारतीय योग साधना परम्परा में योग का मूल उद्देश्य आत्मबोध, चित्तशुद्धि, आर्थिक मूल्यों के साथ सामाजिक व नैतिक मूल्यों में बढ़ोतरी के साथ मोक्ष-मार्ग की प्राप्ति भी रहा है । इसी संदर्भ को ध्यान में रखते हुए गुरु-शिष्य परम्परा की प्रासंगिकता महत्त्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि इसी परम्परा के आधार पर योग को केवल शारीरिक अनुशासन की साधना नहीं, अपितु जीवन को सुनियोजित ढंग से जीने की एक साधना बनाया जाता है ।

बहुशास्त्रगुरूपासनेऽपि सारादानं षट्पदवत्।। [20]

यद्यपि बहुत से शास्त्रों और गुरु उपासना (यहाँ उपासना का अर्थ गुरु द्वारा दिए गए दिशा निर्देश या उपदेश से है ना की गुरु की पूजा या अनुसरण से) का विधान है, जिस प्रकार भंवरा बहुत से फूलों से शहद का संग्रह करता है, ठीक उसी प्रकार आधुनिक युग में गुरु का अनुसरण ना करके उसका सिर्फ अनुकरण करना चाहिए और उनसे केवल सार को लेना चाहिए क्योंकि यह सार स्वरूप ही जीवन को सही दिशा देने में सहायक है । मुण्डक उपनिषद में गुरु को ब्रह्मविद्या का प्रत्यक्ष स्रोत बताते हुए कहा गया है-

परीक्ष्य लोकान् कर्मचितान् ब्राह्मणो निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन ।

तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम् ॥ [21]

[20] **(राज.यो. सांख्य सूत्र 4/13)**

[21] **,मुण्डकोपनिषद** 1ण्2ण्12द्ध

अर्थात स्वकल्याण के इच्छुक मनुष्य को सभी कृत व अकृत कर्मों से वैराग्य की भावना करनी चाहिए । परमात्मा का वास्तविक तत्त्वज्ञान प्राप्त करने के लिये श्रद्धा और विनयभाव के साथ, हाथ में समिधा लेकर वेदों के रहस्य को भलीभांति जानने वाले सद्गुरु जो सर्वदा ब्रह्म निष्ठ (परब्रह्म परमात्मा में स्थित) हों, उसी गुरु की शरण में जाना चाहिए , क्योंकि गुरु को केवल ज्ञाता नहीं है, बल्कि यह तो ब्रह्मज्ञान प्राप्ति का जीवित एवं प्रत्यक्ष माध्यम है ।

गुरु व मोक्ष का प्रत्यक्ष सम्बन्ध-

यस्सकृदुच्चारणः संसारविमोचनो भवति। सर्वपुरुषार्थसिद्धिर्भवति ।
न च पुनरावर्तते न च पुनरावर्तत इति। य एवं वेदेत्युपनिषत् ॥ [22]

'गुरु' शब्द का उच्चारण एक बार भी कर लेने पर मनुष्य को संसार से मुक्ति प्राप्त हो जाती है । सामान्य मनुष्य के गुरु उच्चारण मात्र से ही सभी पुरुषार्थ सिद्ध हो जाते हैं । फिर वह कदापि इस संसार में पुनरागमन नहीं करता, कभी पुनरावर्तन नहीं करता, यह सत्य है अर्थात जन्म मरण के चक्र से मुक्ति/ मोक्ष प्राप्त कर लेता है । जो मनुष्य गुरु सानिध्य को ठीक प्रकार से समझकर आत्मचिंतन करता है उसे सभी फल प्राप्त होते हैं और यहाँ तक भी कहा गया है की गुरु व मोक्ष में अभेद सम्बन्ध है ।

शोध के लाभ-

1. यह शोध भारतीय ज्ञान प्रणाली की सांस्कृतिक धरोहर (गुरु-शिष्य परम्परा) के संरक्षण में सहायक सिद्ध होता है ।
2. यह शोध आधुनिक युग में शिक्षक व विद्यार्थी के परस्पर संबंध के सुदृढ़ीकरण में सहायक है ।
3. इस शोध के माध्यम से वैश्विक स्तर पर भारतीय ज्ञान परंपरा का प्रस्तुतिकरण किया गया है।

निष्कर्ष- "आधुनिक शिक्षा प्रणाली में शिक्षक व प्रशिक्षक साक्षरता व तकनिकी कुशलता व दक्षता प्रदान कर रहे हैं, इसलिए युवाओं के पास डिग्रियां तो हैं लेकिन आदर्श व नैतिक मूल्यों का अभाव है" । इसी स्थिति को ध्यान में रखते हुए इस शोध में वर्णन किया गया है कि जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए गुरु का होना अत्यंत आवश्यक है । गुरु द्वारा प्रदान की गई अनुशासित जीवन शैली ही दैनिक जीवन के प्रत्येक कार्य की सिद्धि के साथ जीवन के परम उद्देश्य कैवल्य प्राप्ति में सहायक है ।

इस शोध के दौरान यह भी स्पष्ट हुआ कि प्राचीन गुरु- शिष्य परंपरा आज के इस भौतिकवादी व प्रतिस्पर्धात्मक युग की भांति केवल साक्षरता तक ही सीमित नहीं है अपितु मानव जीवन के संपूर्ण विकास पर आधारित है । इस प्रणाली के परिणामस्वरूप समाज में तकनीकी दक्षता के साथ अनुशासन, आत्मनियंत्रण और आत्मबोध जैसी विशिष्ट योग्यताओं से सम्पन्न समग्र व्यक्तित्व वाले युवाओं की बढ़ोतरी होगी, जोकि समाज कल्याण के साथ देश कल्याण में भी एक विशेष भूमिका निभाते हैं।

[22] ;द्वयोपनिषद 7द्ध

संदर्भ-

1. Behl, M., and C. Pattiaratchi. 2023. Relevance of the guru-shishya parampara to modern-day mentorship. Oceanography 36(1), https://doi.org/10.5670/oceanog.2023.111. https://share.google/UmquPZfcx1UWAxaYE
2. ईशादि नौ उपनिषद, (२०८० वि.सं.), गीता प्रेस गोरखपुर, कोलकाता ।
3. कबीर साखी संग्रह, (1992) लवेडीयर प्रिंटिंग वर्कस , इलाहबाद ।
4. कुमार स., (2024), गुरु शिष्य परंपरा: अतीत से वर्तमान परिपेक्ष्य में, इंटरनेशनल जरनल ऑफ़ हुमनिटीज एंड इंटर डिसिप्लिनरी स्टडीज, DOI No. 03.2021-11278686. DOI Link : https://doi-ds.org/doilink/03.2024-34249936/IRJHIS2403001, https://share.google/rdFyFwT9Rkjr343s9
5. गुरुसरन सिंह, सुरत प्यारी, रुबीना सक्सेना. गुरु-शिष्य परंपरा: भारत का प्राचीन ज्ञान और बुद्धिमत्ता का मार्ग, GSRQ (Guru Shishya Relationship Quotient) आधारित आकलन. Int J Sanskrit Res 2025;11(5):04-11. DOI: 10.22271/23947519.2025.v11.i5a.2776
6. तडागी सा.,(2022), प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली में गुरु शिष्य सम्बंध, इंटरनेशनल जरनल ऑफ़ इनोवटीव सोसल साइंस एंड हुमनिटीज रिसर्च, ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online), https://share.google/eMWQByiYLKUnrnC2v
7. पोध्दार एस० एच० प०, गोस्वामी च०(2000), उपनिषद अंग्ड 17वां प्रकाशन, गीता प्रेस गोरखपुर, वाराणसी, भारत।
8. मिश्र पी. के., (2017), *गुरु- शिष्य परम्परा एक मुल्यांकन*, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ क्रेअटीव रिसर्च थोट्स, ISSN: 2320-2882. IJCRT1133044
9. वर्मा प्रीति, (2023), गुरु-शिष्य परंपरा एवं संस्थागत संगीत प्रशिक्षण पद्धति की तुलना, Anthology The Research, DOI:10.5281/zenodo.10489707. https://www.socialresearchfoundation.com/new/publish-journal.php?editID=7959
10. शर्मा भ., शर्मा रा. (2022), 108 उपनिषद (ब्रह्मविद्या काण्ड), युगनिर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि, मथुरा ।
11. शर्मा भ., शर्मा रा. (2022), 108 उपनिषद (साधना काण्ड), युगनिर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि, मथुरा ।
12. शर्मा भ., शर्मा रा., (2022), 108 उपनिषद (ज्ञान काण्ड), युगनिर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि, मथुरा।
13. श्रीवास्तव दे. (2025), गुरु-शिष्य परम्परा: भारतीय संस्कृति की आत्मा और ज्ञान की धरोहर, https://share.google/bHuqYndOlwDmjLPKb
14. श्रीव्रजवल्लभद्विवेदी (1999), श्री गुरुगीता (प्रथम संस्करण), शैव भारती- शोधप्रतिष्ठानम प्रकाशन, वाराणसी, आई.अस.बी.अन.नं.- 81-86768-33-5 (Hb), 81-86768-34-3 (Pb)